THE HINDU

Date: 23-11-24

Urgent deadline

Poverty and climate change must be tackled urgently by G-20

Editorial

Tackling global hunger and poverty and promoting climate justice were declared goals for the recent G-20 summit in Rio de Janeiro. Brazilian President Lula Da Silva called poverty a "scourge that shames humanity", asking the gathered nations to implement policies such as taxing the 'super-rich', using a 2% wealth tax on the world's wealthiest to generate more than $200 billion in revenue. But the G-20 declaration fell short of that. Prime Minister Narendra Modi too underlined that the problems of the world are felt most acutely by the 'Global South', and, therefore, that the reins of global administration must belong to those that represent the larger majority in the world. The G-20 hosted by Brazil, was by the third host country of the Global South, after Indonesia in 2022 and India in 2023. The next G-20 is to be in South Africa. The Brazil summit was expected to focus on solutions for the poorer, emerging economies. However, its timing diluted the cause and diffused the focus, given the other issues the world confronts. This was the first G-20 summit since the October 7 attacks on Israel and its reprisals on Gaza and Lebanon. Russia's invasion of Ukraine had also made forging consensus at Bali and New Delhi already quite difficult. With deepening polarised narratives over both conflicts, the G-20 declaration was watered down, expressing only "deep concern" over the humanitarian situation in Gaza, and dropping all reference to Russia while highlighting the "suffering... with regard to global food and energy security". It was devoid of specifics on ending the conflicts.

The G-20 was also timed closely with the COP29 in Azerbaijan — Brazil will be in 2025 host — indicating that issues of climate financing and climate justice, which have been raised by the developing world, would find place in the G-20 declarations, and then feed into the COP process. However, the summit followed just after the U.S. presidential election results, casting its shadow. Given his moves during his first tenure, Donald Trump will not set much store by the aspirations of the Global South. Nor is he likely to expend the kind of resources expected from the U.S. towards tackling global warming or in curtailing the exploitation of fossil fuels. His cabinet has climate deniers and his own campaign slogan was "Drill, baby, drill". Given the portents, the Global South, and the quartet of Indonesia-India-Brazil-South Africa, will have to ensure that the next G-20 is able to concretise the concerns of the developing world, and set out a path for the future on poverty and hunger, climate change and global governance. In 2026, as the G-20 will return to the U.S., the deadline is more urgent.

दैनिक भास्कर

Date: 23-11-24

भ्रष्ट गवर्नेंस का देश की छवि और विकास पर असर

संपादकीय

सवाल किसी उद्योगपति के व्यापार करने के नैतिक-अनैतिक तरीके का नहीं है। उद्योगपति अदाणी के खिलाफ अमेरिका में अभियोग के मूल में है अपने ही देश के कई राज्यों के अधिकारियों को घूस देकर सौर ऊर्जा क्रय का कॉन्ट्रैक्ट लेने का आरोप। आज एआई के प्रयोग और सेमी कंडक्टर उद्योगों को अपने यहां लगाने के लिए भारत दुनिया को निमंत्रण दे रहा है। विदेशी पूंजी निवेश देश की अंतरसंरचना के विकास में बड़ी भूमिका निभाने जा रहा है। ऐसे हालात पैदा हो रहे हैं जब चीन से मुंह मोड़कर दुनिया की बड़ी कंपनियां भारत का रुख कर सकती हैं। ऐसे में गवर्नेंस की भ्रष्ट छवि गहरा और दीर्घकालिक आघात पहुंचा सकती है। इस खुलासे के बाद ऐसा लग रहा है कि भारत में राजनीतिक वर्ग और अफसरशाही की दृष्टि उद्यमियों के उद्योग लगाने से ज्यादा उनके पैसों पर रहती है। गवर्नेंस की छवि पहले भी खराब रही है। ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल की रैंकिंग में वर्ष 2023 में भारत 180 देशों में 93वें स्थान पर पाया गया। एक साल पहले के मुकाबले सात पायदान और नीचे। यहां तक कि इस इंडेक्स पर भारत दुनिया के ही नहीं एशिया-प्रशांत क्षेत्र के देशों के औसत से भी नीचे रहा। ताजा घटना के बाद न केवल देश के स्टॉक मार्केट पर दुनिया के निवेशकों का भरोसा घटेगा, बल्कि भारतीय निर्यात पर भी बुरा असर होगा।

Date: 23-11-24

नैतिकता के सवाल पर दोहरे मापदंडों को पहचानना जरूरी

पवन के. वर्मा, (पूर्व राज्यसभा सांसद व राजनयिक)

क्या हम पाखंडियों का समाज हैं? या थोड़ा और सधे हुए शब्दों में कहें तो क्या हमने अपने सार्वजनिक रवैए और निजी नैतिकता के बीच की खाई को बहुत अच्छे से स्वीकार कर लिया है? या इससे भी बुरी बात, हम इन दोनों के अंतर को भूल ही गए हैं?

स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान, महात्मा गांधी के जबरदस्त प्रभाव के कारण, सार्वजनिक जीवन में सादगी को सभी ने स्वीकार किया था। गांधीजी ने खादी को लोकप्रिय बनाया और वह नेताओं की पोशाक बन गई। लेकिन जल्द ही, जहां गांधी टोपी के साथ पूरा पहनावा सार्वजनिक तौर पर तो दिखता रहा, वहीं निजी जीवन शैली में, भ्रष्टाचार से पैदा हुए उपभोग, पैसे और दिखावटीपन ने जगह बना ली। खादी के मुखौटे में छिपे हमारे राजनीतिक रोल मॉडलों ने अच्छी

जिंदगी जीना जारी रखा, जिसमें बड़े बंगले, सेवकों की सेना और हर तरह की विलासिता थी। त्रासदी यह है कि वे बड़ी सहजता से यह करते रहे और कर रहे हैं।

हमारे संविधान के राज्य नीति के निदेशक सिद्धांतों के अनुच्छेद 47 में सिफारिश की गई है कि सरकार को को बढ़ावा न दें, बल्कि जहां नैतिकता का 'स्वास्थ्य के लिए हानिकारक मादक पेय पदार्थों के सवाल हो, वहां व्यावहारिक रूप से अपने सेवन पर रोक लगानी चाहिए।' इसके तहत, गुजरात ने दोहरे मापदंडों को पहचानें। शराबबंदी लागू की, हरियाणा और कुछ अन्य राज्यों ने भी इसे लेकर प्रयोग किए और हाल के समय में बिहार ने 2016 में इसे लागू किया। शराब के अत्यधिक सेवन को रोकना प्रशंसनीय है। लेकिन हमारे नेता और जनता, दोनों जानते हैं कि शराबबंदी एक अव्यावहारिक समाधान है। इससे बड़े पैमाने पर शराब की तस्करी बढ़ती है, शक्तिशाली शराब माफिया पैदा होते हैं, प्रशासन भ्रष्टाचार में लिप्त हो जाता है, जहरीली और अवैध शराब की बिक्री बढ़ती है और राज्य को जरूरी संसाधन नहीं मिल पाते। फिर भी, ऐसी नीति पर दिखावटीपन जारी है। मैं ऐसे कई नेताओं को जानता हूं जो सार्वजनिक रूप से नींबू पानी पीते हैं और निजी तौर पर स्कॉच । बिहार में शराब हर जगह उपलब्ध है और इसमें खुद अधिकारियों की संलिप्तता मानी जाती है। नतीजा यह है कि शराब के दुरुपयोग के खिलाफ जरूरी नीतिगत उपायों को गंभीरता से लागू नहीं किया जाता।

देश में कैसिनोको अनुमति नहीं है क्योंकि जुए के खिलाफ हमारे उच्च नैतिक सिद्धांत हैं। लेकिन देश में लाखों लोग छिपकर जुआ खेलते हैं और कुछ लोग दिवाली जुआ खेलना शुभ भी मानते हैं। मटका, क्रिकेट मैच और चुनाव के नतीजों पर सट्टेबाजी में आम लोग अरबों रुपए खर्च करते हैं। अनधिकृत जुए के नेटवर्क बड़े पैमाने पर, व्यापक और संगठित हैं। ये बिना किसी कानूनी नियामक ढांचे के और एजेंसियों की मिलीभगत से काम कर रहे हैं। भारतीय काठमांडू, लंदन, मकाऊ, लास वेगास और दुनिया भर के कैसिनो में जाते हैं और उन देशों के पर्यटक राजस्व में इजाफा करते हैं, जिनके नैतिक मानक अक्सर हमसे बेहतर होते हैं। सिक्किम, दमन और दीव और गोवा में कैसिनो वैध हैं। गोवा में, हमारा पाखंड यह है कि केवल मंडोवी नदी में लंगर डालने वाली लग्जरी नावों पर कैसिनो चल सकते हैं, किनारे पर नहीं। 2002 में, हरियाणा विधानसभा ने एक कानून, हरियाणा कैसिनो (लाइसेंसिंग और नियंत्रण) विधेयक पारित किया, जिसका उद्देश्य बुनियादी ढांचे के विकास को बढ़ावा देना, निवेश को आकर्षित करना, पर्यटन बढ़ाना और रोजगार के अवसर पैदा करना था । विधेयक को केंद्र की मंजूरी नहीं मिली ।

शाकाहार हमारा एक और 'नैतिक' चलन बनता जा रहा है, हालांकि सर्वे बताते हैं कि हिंदुओं में भी 52 से 56 फीसदी मांसाहारी हैं। भारत में गोमांस पर सभी राज्यों में पूर्ण प्रतिबंध नहीं है, लेकिन हिंदुओं की भावनाओं को ध्यान में रखते हुए कई राज्यों में उचित ही गोहत्या पर पाबंदी लगाई गई है। हालांकि, हमें भैंस के मांस ('कैराबीफ') के निर्यात से कमाने में ऐतराज नहीं है, जिसके हम दुनिया के दूसरे सबसे बड़े निर्यातक हैं।

नैतिकता को बढ़ावा देना और बुराई को रोकना सरकारों का परम कर्तव्य है। आदर्श रूप से, लोगों को केवल ईमानदार होना चाहिए, खादी पहनना चाहिए, शराब से दूर रहना चाहिए, जुआ खेलना बंद कर देना चाहिए और सात्विक भोजन करना चाहिए । लेकिन अगर यह संभव होता, तो भी इसे हासिल करने के किसी भी प्रयास में हमारा पाखंड आड़े आ जाता। हमारा राष्ट्रीय आदर्श वाक्य है : सत्यमेव जयते। यह एक प्रेरक आह्वान है, जो हमारी दार्शनिक विरासत की बुलंदी और साहस को दर्शाता है। आइए, हम असल जिंदगी में भी इसका सम्मान करें। इसके लिए अनैतिकता को बढ़ावा न दें, बल्कि जहां नैतिकता का सवाल हो, वहां व्यावहारिक रूप से अपने दोहरे मापदंडों को पहचानें ।

दैनिक जागरण

Date: 23-11-24

कठघरे में अदाणी

संपादकीय

एक अमेरिकी अदालत ने जाने-माने कारोबारी गौतम अदाणी, उनके भतीजे सागर अदाणी और उनकी कंपनी अदाणी ग्रीन एनर्जी के कुछ अधिकारियों के खिलाफ भारत में सौर ऊर्जा आपूर्ति का अनुबंध हासिल करने के लिए दो हजार करोड़ रुपये से अधिक की रिश्वत देने और अमेरिकी निवेशकों को गुमराह करने के जो आरोप लगाए, वे सनसनीखेज तो हैं ही, अदाणी समूह की मुश्किल बढ़ाने वाले भी हैं। चूंकि आरोप गंभीर हैं, इसलिए केवल यही नहीं देखा जाना चाहिए कि अमेरिकी अदालत अंततः किस नतीजे पर पहुंचती है, बल्कि भारत में भी इन आरोपों की जांच होनी चाहिए। यह जांच न केवल नीर-क्षीर ढंग से होनी चाहिए, बल्कि ऐसा होते हुए दिखनी भी चाहिए। हाल के समय में यह दूसरी बार हैं, जब अदाणी समूह किसी विवाद में फंसा और उसके चलते शेयर बाजार लड़खड़ाया। इसके पहले अमेरिकी शार्ट सेलिंग कंपनी हिंडनबर्ग रिसर्च ने अदाणी समूह पर शेयरों में हेराफेरी के आरोप लगाए थे, जिसके चलते उसे अच्छा-खासा नुकसान उठाना पड़ा था। अदाणी समूह इस नुकसान से उबरा ही था कि अमेरिकी अदालत की पहल ने उसे कठघरे में खड़ा कर दिया। इस कार्रवाई ने अदाणी समूह की साख पर बट्टा लगाने का ही काम नहीं किया, बल्कि यह गंभीर सवाल भी खड़ा कर दिया है कि क्या भारत में राजनीतिक रसूख और रिश्वत के जरिये ठेके हासिल करना आसान है ? दावा कुछ भी किया जाए, तथ्य यही है कि अपने देश में छोटे-बड़े कारोबारी समूह नेताओं और नौकरशाहों को अपने प्रभाव में लेकर मनचाहे सौदे करने में सफल रहते हैं। इस मामले में कोई भी राजनीतिक दल अपने दामन को पाक-साफ नहीं कह सकता।

एक ऐसे समय जब यह अपेक्षा बढ़ रही है कि भारतीय कारोबारी देश के साथ दुनिया में भी अपना प्रभाव बढ़ाएं, तब यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि वे न केवल भारत में, बल्कि विदेश में भी नियम-कानूनों के तहत काम करें। यदि ऐसा नहीं किया जाता तो भारतीय कंपनियों का भी नाम खराब होगा और भारत का भी। खतरा इसका भी है कि भारतीय कंपनियों को जानबूझकर निशाना बनाने और उन्हें बदनाम करने का सिलसिला कायम हो जाए। भारतीय कंपनियों की साख के साथ उनका अंतरराष्ट्रीय प्रभाव बढ़े, इसकी चिंता सरकार के साथ विपक्ष को भी करनी चाहिए। यह ठीक है कि कांग्रेस और कुछ अन्य विपक्षी दल अदाणी समूह के साथ मोदी सरकार के प्रति हमलावर हैं, लेकिन इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती कि कठघरे में आंध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़ और ओडिशा की पिछली सरकारें भी हैं और तमिलनाडु की वर्तमान सरकार के साथ जम्मू-कश्मीर सरकार भी। इसमें संदेह नहीं कि गौतम अदाणी और उनके सहयोगियों पर लगे आरोप गंभीर हैं, लेकिन अभी इस नतीजे पर भी पहुंचने की हड़बड़ी नहीं दिखाई जानी चाहिए कि अमेरिकी अदालत ने जो कुछ कहा, वही अंतिम सत्य है। ध्यान रहे कि अभी तक पैसे के लेन-देन के कोई प्रमाण सामने नहीं आए हैं।

Date: 23-11-24

चिकित्सकों की कमी

संपादकीय

उत्तर प्रदेश में प्रांतीय चिकित्सा सेवा (पीएमएस) संवर्ग के सेवानिवृत्त चिकित्सकों से 70 वर्ष की आयु तक संविदा पर काम लेने का प्रस्ताव कर सरकार ने उन्हें पुनः नियुक्ति देने का रास्ता जरूर निकाल लिया है, लेकिन इसे समस्या के वास्तविक समाधान के रूप में नहीं देखा जा सकता। स्वास्थ्य क्षेत्र की सबसे बड़ी समस्या यह है कि सरकारी अस्पतालों में चिकित्सकों की संख्या में लगातार कमी आती जा रही है और शिक्षक भी निजी प्रैक्टिस और कारपोरेट अस्पतालों को अधिक महत्व दे रहे हैं। प्रदेश की स्वास्थ्य सुविधा सरकारी अस्पतालों की नींव पर ही खड़ी हुई है और गरीबों एवं वंचितों का सबसे बड़ा सहारा भी वे ही हैं। सरकारी अस्पतालों में लगातार रोगियों की भीड़ बढ़ रही है, इसलिए भी जरूरी है कि वहां सभी संसाधन सुलभ कराए जाएं। विशेष तौर पर चिकित्सकों के तो सभी पद भरे ही जाने चाहिए। इसे देखते हुए ही राज्य सरकार ने पूर्व में चिकित्सकों की सेवानिवृत्ति की उम्र 62 से बढ़ाकर 65 कर दी थी और उनसे आगे भी काम लिया जा सके इसके लिए उन्हें पुनर्नियोजित कर संविदा पर 70 साल तक काम लेने का विचार किया जा रहा है, लेकिन इससे बहुत फर्क नहीं पड़ने वाला। कोई समस्या गंभीर होती जा रही हो तो उसके मूल कारण को खोजकर समाधान की ओर बढ़ना चाहिए। प्रांतीय चिकित्सा सेवा संवर्ग में चिकित्सकों के 18,500 पद सृजित हैं, जिनमें सात हजार पद रिक्त हैं। ऐसा क्यों है? यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है और इसके जवाब के लिए सरकार को एमबीबीएस और एमडी की डिग्री लेने वालों के बीच ही जाना होगा। सरकारी मेडिकल कालेजों में पढ़कर वहां के संसाधनों का उपयोग कर डाक्टर बनने वालों की समाज के प्रति भी कुछ जिम्मेदारियां होनी चाहिए। कारपोरेट चिकित्सा संस्थानों में उन्हें अधिक पैसा जरूर मिल रहा है, लेकिन गरीबों और लाचारों के प्रति भी उन्हें अपने कर्तव्य को समझना होगा।

Date: 23-11-24

सुनिश्चित की जाए बच्चों की सुरक्षा

क्षमा शर्मा, (लेखिका साहित्यकार हैं)

पिछले दिनों गाजियाबाद से खबर आई कि नर्सरी में पढ़ने वाली चार साल की बच्ची का बस के चालक परिचालक और सहायक ने यौन शोषण किया। स्कूल अधिकारियों को जब पता चला तो तीनों को नौकरी से निकाल दिया गया और उन पर केस दर्ज कराया। बच्ची के परिवार वालों ने केस दर्ज नहीं कराया था। दूसरे बच्चों के माता-पिता को जब इस बात की सूचना मिली तो उन्होंने स्कूल के बाहर विरोध-प्रदर्शन किया। खबर के अनुसार बच्ची उस वक्त बस में अकेली थी। सवाल यह है कि इतनी छोटी बच्ची बस में अकेली क्यों थी? उसके साथ स्कूल की कोई महिला कर्मचारी क्यों नहीं थी? हाल में उत्तर प्रदेश महिला आयोग ने इस तरह की मांग की थी कि सभी स्कूल बसों में महिला सुरक्षा कर्मचारियों को

होना चाहिए। उत्तर प्रदेश के शामली जिले में तो अधिकारियों ने इस तरह की व्यवस्था भी कर दी है. कि स्कूल बसों में महिला सुरक्षा गार्ड या महिला शिक्षक का होना जरूरी है। ध्यान रहे कि निर्भया कांड के बाद दफ्तरों में महिला कर्मचारियों की सुरक्षा के लिए यह नियम बनाया गया था कि रात की पाली में काम करने वाली महिला कर्मचारियों के साथ दफ्तर का कोई कर्मचारी अवश्य होगा और वह यह सुनिश्चित करेगा कि महिला या लड़की अपने घर सकुशल पहुंच जाए। आखिर ऐसा नियम स्कूल बसों पर लागू क्यों नहीं है ?

छोटी बच्चियां तो यौन अपराध को समझ भी नहीं सकतीं। उनके दिल में ऐसी घटनाओं के प्रति इतना भय बैठ जाता है कि कई बार उसे दूर करना मुश्किल हो जाता है। इसीलिए पुलिस उन बच्चियों की काउंसलिंग कराती है, जिनके साथ ऐसा अपराध हुआ होता है। चिंता की बात यह है कि ऐसी खबरें लगातार आती रहती हैं। रतलाम में एक पांच वर्ष की बच्ची के साथ स्कूल के ही एक कर्मचारी के नाबालिग लड़के ने यौन अपराध किया। ठाणे के एक स्कूल में स्कूल के ही एक कर्मचारी ने दो बच्चियों के साथ यौन अपराध किया। नोएडा के एक नामी स्कूल में भी छोटी बच्ची के साथ डिजिटल रेप किया गया। इन सभी मामलों में बच्चों के माता-पिता स्कूल में विरोध करने भारी संख्या में पहुंचे। एनसीआरबी के 2023 के आंकड़ों के अनुसार 2022 में बच्चों के प्रति अपराधों (यौन अपराध समेत) में 26 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। दिल्ली में सबसे अधिक 7,400, मुंबई में 3,178, बेंगलुरु में 1,578 और जयपुर में सबसे कम 748 दर्ज किए गए, जबकि कर्नाटक में ऐसे मामलों में छियालीस प्रतिशत तक बढ़ोतरी देखी गई।

बहुत पुरानी बात नहीं, इसी साल जनवरी में यह बताया गया था कि बच्चों के खिलाफ साइबर क्राइम में 32 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है। अफसोस की बात यह है कि बच्चों के खिलाफ अपराधों का ग्राफ बढ़ता ही जा रहा है। वैसे तो बच्चे और बच्चियां दोनों ही यौन अपराधों का शिकार हो रहे हैं, मगर बच्चियों की संख्या ज्यादा है। सवाल यह है कि जिन स्कूलों में बच्चे और बच्चियां पढ़ने जाते हैं, वहां जब कोई अपराध हो जाता है, तभी अधिकारी क्यों जागते हैं? पहले से इन बातों पर ध्यान क्यों नहीं दिया जाता या हम उस दौर में फिर से पहुंचना चाहते हैं, जहां लड़कियां लड़कियों के ही स्कूल में पढ़ती थीं। माना जाता है कि लड़के-लड़कियां अगर साथ पढ़ते हैं, तो उनका विकास सही तरीके से होता है। यह धारणा सही भी है। जब ऐसे सर्वेक्षण किए जाते थे कि माता-पिता आखिर अपनी बच्चियों को स्कूल क्यों नहीं भेजते या बीच में ही उनकी पढ़ाई क्यों छुड़वा दी जाती है तो माता-पिता यही कहते थे कि उन्हें अपनी लड़कियों की सुरक्षा की चिंता रहती है। बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने जब स्कूल जाने वाली लड़कियों को साइकिलें दी थीं, तो स्कूल जाने वाली लड़कियों की संख्या में भारी उछाल आया था। उस समय समाचार पत्रों में स्कूल जाने वाली लड़कियों के चित्र छापे जाते थे। वे इतनी ज्यादा थीं कि सड़क पर एक इंद्रधनुष सा दिखाई देता था । इस तरह समूह में जाने पर उनकी सुरक्षा की चिंता भी उतनी नहीं रहती थी, लेकिन जब दिल्ली और मुंबई जैसे महानगरों में स्कूलों में बच्चियों-बच्चों के प्रति तरह-तरह के अपराध हो रहे हैं, तो क्या यह धारणा गलत मान ली जाए कि महानगर महिलाओं, बच्चियों, लड़कियों के लिए अधिक सुरक्षित होते हैं? स्कूलों में होने वाले अपराधों को कैसे बढ़ने से रोका जा सकता है? इस पर सिर्फ विचार-विमर्श ही न हो, बल्कि प्रभावी उपायों को जमीन पर उतारा जाए। यदि बच्चियां स्कूल और स्कूल परिवहन के साधनों में ही सुरक्षित नहीं, तो वे पढ़ेंगी कैसे? कैसे माता- पिता स्कूलों पर भरोसा करेंगे कि एक बार बच्ची या बच्चा स्कूल चला गया, तो घर वापस आने तक उसे कोई खतरा नहीं है।

इन दिनों मोबाइल पर पोर्न सहज उपलब्ध है। भारत में इसे देखने वाले भी बहुत हैं। छोटे बच्चों के साथ बनाई गई ऐसी फिल्मों को भी देखने वाले लोग हैं। भारत सरकार भले ही इस तरह के पोर्न पर प्रतिबंध लगा दे, लेकिन इंटरनेट के जमाने में इन्हें कहीं न कहीं से खोज ही लिया जाता है। यौन अपराधों में पोर्न की बड़ी भूमिका मानी जाती है। जब से

हर एक के हाथ में स्मार्टफोन आया है, ऐसे अपराध लगातार बढ़ रहे हैं। कुछ साल पहले मुंबई में दो बच्चों ने पांच साल की एक बच्ची से दुष्कर्म किया था। ऐसे में बच्चियां क्या करें? वे कहां जाएं, क्योंकि न स्कूल, न बस, न खेल की जगह सुरक्षित है। कई बार तो कामकाजी माता-पिता अपने बच्चों की देखभाल के लिए जिन सहायकों को रखते हैं, वे भी बच्चों के साथ अपराध करते पाए जाते हैं। यदि मासूम बच्चे ही सुरक्षित नहीं तो समाज में कौन सुरक्षित रह सकता है?

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 23-11-24

प्रक्रिया के बंदी

संपादकीय

केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह ने कहा है कि संविधान दिवस के दिन उन विचाराधीन कैदियों को रिहा किया जाएगा जिन्होंने अपराध की अधिकतम तय सजा का एक तिहाई हिस्सा जेल में काट लिया है। यह देश की भीड़ भरी जेलों में जगह बनाने का एक नेक प्रयास है। परंतु काफी कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि जेल अधिकारी एक सप्ताह से भी कम समय में सूची संकलित करने और उसे तैयार करने पर निर्भर करेगा। यह बहुत भारी काम है। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के मुताबिक देश की जेलों में बंद कुल कैदियों में 75 फीसदी विचाराधीन हैं। 2017 से अब तक इनमें 41 फीसदी का इजाफा हुआ है। विगत 19 वर्षों से जेलों में भीड़ कम करने के प्रयासों के बावजूद ऐसे हालात बने हुए हैं।

उदाहरण के लिए संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन सरकार द्वारा 2005 में पेश दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 436 ए में कहा गया कि ऐसे विचाराधीन कैदी (उन कैदियों के अलावा जिन्होंने मृत्युदंड पाने लायक अपराध किए हों) जो अपराध के लिए तय अधिकतम सजा का आधा समय जेल में बिता चुके हों, उन्हें अदालतें जमानत के साथ या उसके बिना पर्सनल बॉन्ड पर रिहा कर सकती हैं। 2009 तक इस दिशा में अधिक प्रगति नहीं हुई। देश के तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश के जी बालकृष्णन ने भी मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेटों को यह निर्देश दिया कि वे मामूली अपराधों के लिए बंद विचाराधीन कैदियों की तादाद का पता लगाएं और उनमें से जो उनके अपराधों के लिए तय सजा की आधी से अधिक अवधि जेल में बिता चुके हैं उन्हें पर्सनल बॉन्ड पर रिहा कर दिया जाए। इस मामले में भी बहुत धीमी प्रगति हुई। मुख्यतौर पर ऐसा इसलिए हुआ कि अधिकांश विचाराधीन कैदी बॉन्ड या जमानत की व्यवस्था नहीं कर सके। नरेंद्र मोदी के नेतृत्व वाली सरकार ने गत वर्ष एक योजना पेश की जिसके तहत उन कैदियों को वित्तीय सहायता दी जानी थी जो जमानत नहीं करवा सकते थे। योजना के तहत विचाराधीन कैदियों को 40,000 रुपये और दोषसिद्ध लोगों को 25,000 रुपये तक की वित्तीय सहायता दी जा सकती थी। इसके लिए जिलाधिकारियों की अध्यक्षता वाली अधिकार प्राप्त समिति की मंजूरी आवश्यक थी। परंतु नवंबर में इंडियास्पेंड में प्रकाशित एक अध्ययन जिसमें छह राज्यों से सूचना के अधिकार के तहत हासिल प्रतिक्रियाएं शामिल थीं, में पाया गया कि केवल महाराष्ट्र में 10 विचाराधीन और एक सजायाफ्ता कैदी को इस योजना के तहत रिहा किया गया।

कुल मिलाकर कानूनों और अदालतों का रुख प्रगतिशील रहा है। दंड प्रक्रिया संहिता का स्थान लेने वाली भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता (बीएनएसएस) की धारा 479 में पिछले कानून के प्रावधानों को दोहराया गया और पहली बार अपराध करने वालों को अपनी सजा का एक तिहाई समय जेल में गुजार चुके होने के बाद जमानत पर रिहा करने की इजाजत दी गई। यह धारा जेल अधीक्षकों को भी यह अधिकार देती है कि अगर किसी विचाराधीन कैद की सजा की आधी या एक तिहाई अवधि बीत चुकी है तो वह न्यायालय को आवेदन कर सकते हैं। इस वर्ष अगस्त में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि बीएनएसएस की धारा 479 को उन मामलों अतीत की तिथि से लागू किया गया है जहां मामले पहली बार अपराध करने वालों से जुड़े हैं। यह कानून 1 जुलाई, 2024 को प्रभावी हुआ। न्यायालय ने सभी राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों को भी आदेश दिया है कि वे दो महीनों के भीतर हलफनामे देकर उन विचाराधीन कैदियों का ब्योरा दें जो धारा 479 के तहत पात्रता रखते हैं। अक्टूबर तक 36 में से केवल 19 राज्यों ने अपनी रिपोर्ट पेश की है।

समस्या का एक हिस्सा निर्णय लेने की प्रक्रिया की विवेकाधीन प्रकृति है जो पीठासीन न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट पर निर्भर करती है। जो कुख्यात रूप से भीड़भाड़ भरी न्याय प्रणाली में एक निरंतर चुनौती के समान है। जेल में प्रशिक्षित कर्मचारियों की कमी के कारण जेलों में क्रूरता और अफरातफरी के हालात बनते हैं और पहचान की प्रक्रिया प्रभावित होती है। यदि इस प्रक्रिया को तत्काल व्यवस्थित किया जा सका तो शाह का यह कदम देश के विचाराधीन कैदियों के लिए वास्तविक राहत हो सकती है।

Date: 23-11-24

मणिपुर में हिंसा और पूर्वोत्तर की राजनीति

आदिति फडणीस

नैशनल पीपल्स पार्टी (एनपीपी) के अध्यक्ष और मेघालय के मुख्यमंत्री कॉनराड संगमा ने मणिपुर की भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) नीत सरकार से समर्थन वापस ले लिया। राज्य की 60 सदस्यीय विधान सभा में भाजपा के 32 विधायक हैं। सात विधायकों वाली एनपीपी के पीछे हटने से पूर्ण बहुमत वाली सरकार पर कोई फर्क नहीं पड़ा है। विशेष बात यह है कि एनपीपी असम के मुख्यमंत्री हिमंत विश्व शर्मा द्वारा पूर्वोत्तर राज्यों के लिए राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) की तर्ज पर बनाए गए राजनीतिक मोर्चे नॉर्थ ईस्ट डेमोक्रेटिक एलायंस से अलग नहीं हुई है। पार्टी उन गठबंधन सरकारों में भी बनी साझेदार है, जिनमें भाजपा शामिल है।

मेघालय में 31 विधायकों वाली एनपीपी सरकार को भाजपा के दो विधान सभा सदस्यों का भी समर्थन प्राप्त है। नागालैंड में एनपीपी के 5 एमएलए हैं और वह नैशनल डेमोक्रेटिक प्रोग्रेसिव पार्टी (एनडीपीपी) के नेतृत्व वाली सरकार का हिस्सा है। इसी प्रकार अरुणाचल प्रदेश में पांच सदस्यों वाली एनपीपी भाजपा नीत सरकार में हाथ बंटा रही है।

मणिपुर में एनपीपी अध्यक्ष कॉनराड संगमा की मांग है कि भाजपा एन. बीरेन सिंह को मुख्यमंत्री पद से हटाए तो वह सरकार को दोबारा समर्थन देने के लिए तैयार हैं। भले ही संगमा सरकार से हटने को अपने दिल की आवाज पर उठाया

गया कदम बता रहे हों, लेकिन इसमें भी राजनीति और स्वार्थ झलकता है। मणिपुर के जिरीबाम जिले में हिंसा की हाल की घटनाओं मैं कम कम 19 लोग मारे गए हैं। मणिपुर में लगभग 50 फीसदी आबादी मैतेई समुदाय की है।

मणिपुर हाई कोर्ट ने राज्य सरकार को इस समुदाय को जनजाति का दर्जा दिए जाने की मांग पर विचार करने की बात कही थी। इसी आधार पर जब मैतेई लोगों ने सरकार के समक्ष अपनी आवाज उठाई तो राज्य के अन्य जनजातीय समूहों के साथ 2023 में व्यापक स्तर पर हिंसा भड़क उठी।

मैतेई समुदाय को आरक्षण की व्यवस्था किए जाने का मतलब होगा कि राज्य के कुकी जो और नागा जैसे दो प्रमुख जनजातीय समुदायों के लिए शिक्षा और सरकारी नौकरियों में मिले आरक्षण में से उसे भी हिस्सा दिया जाएगा। बस, इसी को लेकर पूरे पूर्वोत्तर में स्थिति बिगड़ गई। मैतेई समुदाय के लोग असम, त्रिपुरा, नागालैंड, मेघालय और मिजोरम में रहते हैं, लेकिन मणिपुर में इनकी संख्या सबसे ज्यादा है। कुकी जो समुदाय के लोग भी पूरे पूर्वोत्तर क्षेत्र में फैले हैं। इस जनजाति की जड़ें चूंकि म्यांमार की चिन जनजाति से मिलती हैं, इसलिए इस पड़ोसी देश में जब से तख्तापलट हुआ है तब से बड़ी संख्या में शरणार्थी वहां से भारत आ रहे हैं। इससे मैतेई समुदाय में यह भय घर कर गया है कि यदि इसी तरह शरणार्थी आते रहे तो कुकी- जो की संख्या राज्य में उनसे ज्यादा हो जाएगी।

मणिपुर में होने वाली घटनाओं पर असम समेत पूर्वोत्तर के सभी राज्यों ने संज्ञान लिया है। सभी चाहते हैं कि हिंसा रुकनी चाहिए, लेकिन इस बात को लेकर मतभेद हैं कि यह काम किस प्रकार अंजाम दिया जाए। हथियारों से लैस उग्रवादी समूह क्षेत्र में सभी सरकारों के लिए संकट का सबब बने हुए हैं। लेकिन, संगमा के समक्ष दोहरी चुनौती है। हिंसा की बढ़ती घटनाओं के विरोध में अपनी पार्टी और स्वयं के हितों के लिए कुछ भी निर्णय लेते समय उन्हें अपने वोट बैंक को ध्यान में रखना होगा।

मणिपुर सरकार में साझेदार होने के बावजूद संगमा के विधायक सभी प्रकार के लाभ से वंचित हैं। उनमें से अधिकांश ने राज्य की भाजपा सरकार को समर्थन जारी रखने की बात कही है।

लेकिन, वर्ष 2007 से 2012 तक मणिपुर के पुलिस महानिदेशक, एन. बीरेन सिंह के नेतृत्व वाली पहली सरकार में मंत्री रहे और अब एनपीपी के उपाध्यक्ष वाई जॉय कुमार जैसे नेताओं का मानना है कि भाजपा फडणीस उनकी पार्टी गर्त में चली जाएगी।

गारो जनजाति से ताल्लुक रखने वाले संगमा अच्छी तरह जानते हैं कि मणिपुर में असुरक्षित महसूस कर रहे कुकी जो जनजाति के लोगों को मेघालय में नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। वह यह भी जानते हैं कि यदि पूर्वोत्तर के अन्य राज्यों में अपनी पार्टी एनपीपी का विस्तार करना है तो सहानुभूति के साथ इस जनजाति को साथ लेकर चलना ही होगा। इसीलिए संगमा सरकार ने अपने शीर्ष अधिकारियों को निर्देश दिया कि वे कुकी जो समुदाय के उन लोगों की मदद करें, जो मणिपुर से भाग कर मेघालय आ गए हैं। उन्होंने नई दिल्ली से भी यह इच्छा जाहिर की थी कि वह विभिन्न समूहों के बीच बातचीत के लिए मध्यस्थता करना चाहते हैं ताकि निष्पक्ष तरीके से उनकी समस्याओं को समझ कर पूरी तरह दूर किया जा सके। इसमें एक-एक शब्द बड़ी ही सावधानी से चुना गया था, ताकि किसी के दिल को ठेस न पहुंचे। लेकिन, उनकी इस अपील का कोई असर नहीं हुआ। उल्टे मणिपुर के मुख्यमंत्री ने उनकी पार्टी के सदस्यों को सरकार में किसी भी प्रकार की सलाह-मशविरे की प्रक्रिया से दूर कर दिया और हिंसा की छिटपुट घटनाओं को दबाने के लिए

अर्धसैनिक बलों का इस्तेमाल किया। धीरे-धीरे कानून- व्यवस्था की स्थिति इतनी बिगड़ गई कि इस महीने की शुरुआत में गृह मंत्री अमित शाह को महाराष्ट्र में अपना चुनावी अभियान छोड़कर मणिपुर जाना पड़ा।

पूर्वोत्तर की राजनीति में कॉनराड संगमा कोई अनजान चेहरा नहीं हैं। आप कह सकते हैं कि उत्तर-पूर्व के राज्यों की राजनीति उनकी रग-रग में समाई है। उनके पिता पीए संगमा वर्षों तक कांग्रेस में हैसियत वाले नेता रहे। कॉनराड को भी युवा और महत्त्वाकांक्षी राजनेता माना जाता है जो पूर्वोत्तर के राजनीतिक पटल पर नाम कमाना चाहते हैं। वह स्थानीयता पहचान और धर्म के लिए भी काफी मुखर होकर आवाज उठाते हैं। उन्होंने यूनिफार्म सिविल कोड का भी खुलकर विरोध किया और तर्क दिया कि यह गलत है, क्योंकि यह मेघालय की संस्कृति से मेल नहीं खाता है।

उन्होंने नागरिकता (संशोधन) विधेयक का भी विरोध किया और मांग की कि मेघालय एवं असम को सीएए से अलग रखा जाए। मालूम हो कि मेघालय में ईसाई समुदाय की जनसंख्या अधिक है। यह जानते हुए कि मणिपुर सरकार को उनका समर्थन व्यापक तौर पर अप्रांसगिक ही है और सरकार से हटने पर उनके विधायक भाजपा के पाले में भी जा सकते हैं, जिससे उन्हें भारी राजनीतिक नुकसान उठाना पड़ सकता है, इसके बावजूद संगमा ने अपने मौजूदा कदम से एक बड़ा दांव खेला है। कुकी जो समुदाय की नजर में उनकी अहमियत काफी बढ़ गई है। उनका रुख कितना कारगर साबित होगा, यह तो भविष्य ही बताएगा।

जनसत्ता

Date: 23-11-24

संकट और जिम्मेदारी

संपादकीय

दुनिया भर में जलवायु पर मंडराते संकट का दायरा इतना व्यापक और गंभीर है कि विश्व के सभी देश चिंतित हैं और मिल बैठ कर इसका समाधान निकालना चाहते हैं। इस मकसद से अंतरराष्ट्रीय स्तर पर जलवायु सम्मेलन होते रहते हैं मगर इससे बड़ी विडंबना और क्या होगी कि दशकों से हर वर्ष आयोजित सम्मेलन में ज्यादातर देशों की हिस्सेदारी 'बावजूद अब तक कोई ऐसा खाका सामने नहीं आ सका है, जिसमें जिम्मेदारियों और जवाबदेहियों के मसले पर एक न्यायपूर्ण दृष्टि अपनाई जाए और उस पर सभी देशों की सहमति बने। नतीजतन, जलवायु संकट पर आयोजित सम्मेलनों के बाद अब तक कोई ठोस प्रारूप सामने नहीं आ सका है। इस मसले की गंभीरता को समझने और स्वीकार करने के बावजूद ज्यादातर देशों के बीच मतभेद और अपनी जवाबदेही से दूर भागने की प्रवृत्ति क्यों बनी हुई है!

गौरतलब है कि इस वर्ष अजरबैजान के बाकू में हुए सीओपी - 29 में भी विकसित और विकासशील देशों के बीच समस्याओं की गहराई पर विचार में कोई कमी नहीं देखी गई, मगर समाधान के रास्ते और जिम्मेदारियों के स्तर पर सहमति नहीं बनी बाकू में विकासशील देशों के लिए नए जलवायु वित्त पैकेज का मसविदा तो पेश किया गया, लेकिन उसमें प्रमुख मुद्दे बरकरार रहे। दरअसल, विकसित देश अब भी इस सवाल का जवाब देने से कतरा रहे हैं कि वे 2025 से विकासशील देशों को जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए हर वर्ष कितना वित्तीय सहयोग देने को तैयार हैं ।

विकासशील देशों ने लगातार इस पक्ष को उठाया है कि ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में कटौती और जलवायु अनुकूलन के लिए उन्हें कम से कम तेरह खरब अमेरिकी डालर की जरूरत है। विचित्र यह है कि बाकू में पेश संशोधित मसविदे में विकसित देशों से वित्तीय सहयोग की जरूरत के पहलू को तो स्वीकार किया गया, लेकिन इस पर सहमति के मामले में कोई ठोस उपलब्धि हासिल नहीं हुई। यह समझना मुश्किल नहीं है कि ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में कटौती के उपाय लागू करने के संदर्भ में विकासशील देशों को किन जटिल स्थितियों का सामना करना पड़ सकता है ! इसमें कोई दोराय नहीं कि ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन जलवायु संकट के लिए सबसे बड़े कारकों में से एक है और बिना देरी किए इसका समाधान निकालने के लिए रास्ते तलाशने की जरूरत है। मगर सवाल है कि क्या इसके लिए केवल विकासशील देश जिम्मेदार हैं !

जब भी इस समस्या के दायरे और इसकी जिम्मेदारी लेने की बात उठाई जाती है तो विकसित देशों की ओर से आखिर किन वजहों से कार्बन उत्सर्जन को मुख्य सवाल बनाने की कोशिश होती है? इन्हीं वजहों से गुरुवार को भारत को यह स्पष्ट रूप से कहना पड़ा कि वह विकासशील देशों के लिए जलवायु वित्त से ध्यान हटा कर उत्सर्जन में कमी लाने पर ध्यान केंद्रित करने के विकसित देशों के किसी भी प्रयास को स्वीकार नहीं करेगा। यह छिपा नहीं है कि विकासशील देशों में अभी विकास किस स्तर की चुनौतियों से गुजर रहा है, जबकि विकसित देशों में संसाधनों और सुविधाओं के उपभोग की स्थिति यह है कि जलवायु संकट के लिए जिम्मेदार ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को लेकर अक्सर वही कठघरे में खड़े पाए जाते हैं। विकसित देशों में जलवायु से जुड़े खतरे को लेकर चिंता है, तो जरूरत इस बात की है इस समस्या की जिम्मेदारी विकासशील देशों पर थोपने के बजाय वे खुद आगे आकर इसके ठोस हल का रास्ता निकालने में अपनी भूमिका तय करें।

Date: 23-11-24

जुए का जाल

संपादकीय

कुछ मशहूर खिलाड़ियों और जानी-मानी हस्तियों ने 'गेमिंग ऐप' का जिस तरह भ्रमित कर देने वाला प्रचार किया है, उसके बुरे नतीजे साफ दिखने शुरू हो गए हैं। आनलाइन गेमिंग की आड़ में नए तौर-तरीके से सट्टेबाजी हो रही है और उसके शिकार हो रहे हैं किशोर और युवा। आनलाइन गेम की लत उन्हें इस जुए के नए जाल में फंसा रही है। उत्तर प्रदेश के झांसी में नर्सिंग की एक छात्रा ने सट्टे में बड़ी रकम गंवाने के बाद जो किया, वह कोई अकेली घटना नहीं है । कुछ महीने पहले अलीगढ़ में भी एक लड़के ने ऐसी सट्टेबाजी में हजारों रुपए बर्बाद करने के बाद अपने ही अपहरण की झूठी कहानी रची थी । झांसी में टोडी फतेहपुर की छात्रा ने भी दोस्तों के साथ मिल कर वही कहानी दोहराई और अपने ही परिजनों से छह लाख रुपए की फिरौती मांगी। दरअसल, आजकल आनलाइन सट्टेबाजी का चस्का जिस तरह लोगों को लगा है, वह कई भारतीय

परिवारों के लिए परेशानी का सबब बन गया है। झांसी का मामला ऐसी घटनाओं की एक कड़ी भर है। ऐसे हजारों युवा होंगे जो रोज लाखों रुपए गंवा रहे होंगे और जिन पर किसी की नजर नहीं जा पाती ।

सवाल है कि किसी तरह की सट्टेबाजी गैरकानूनी होने के बावजूद चोरी-छिपे या खुलेआम विज्ञापन देकर युवाओं को अगर जुए की लत में फंसाया जा रहा है, तो इसके लिए कौन जिम्मेदार है ? आनलाइन गेमिंग के नाम पर चल रहे इस खेल को कौन बढ़ावा दे रहा है और इसके नतीजे क्या आ रहे हैं, यह कानून की नजर में अवश्य होना चाहिए। पिछले कुछ समय से कई 'बेटिंग ऐप्स' और वेबसाइटों पर खुलेआम सट्टेबाजी हो रही है। पहली बार कोई सट्टा जीतता है, तो फिर उसके बाद उसके लिए एक दलदल तैयार हो जाता है, जिसमें घुसने के बाद वह निकल नहीं पाता। शुरू में कमाई हुई, फिर कब सारी पूंजी लुट गई, इसका अहसास तब होता है जब पीड़ित को यह पता चलता है कि दोस्तों से कर्ज लिए रुपए भी डूब गए। यह भी संभव है कि सट्टेबाजी कराने वाली कंपनियां युवाओं की मनोस्थिति भांप कर उनको जाल में फंसाती हों। इस तरह के खेल में उलझना एक अंधी सुरंग में भटक जाने की तरह है । इसमें फंसने वाले युवाओं और किशोरों को बचाने की जरूरत है।

Date: 23-11-24

समावेशी विकास की चुनौतियां

आतिफ रब्बानी

पिछले एक दशक से भारतीय अर्थव्यवस्था की गाड़ी सम्मानजनक रफ्तार से आगे बढ़ रही है। आर्थिक सर्वेक्षण 2023-24 के अनुसार पिछले तीन वर्षों में भारतीय अर्थव्यवस्था ने सुधार की कई मंजिलें तय की हैं और इसमें व्यवस्थित तरीके से विस्तार हुआ है। वित्त वर्ष 2024 में वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद यानी जीडीपी का स्तर वर्ष 2020 के मुकाबले बीस फीसद अधिक हो गया है। दुनिया की कुछ ही अर्थव्यवस्थाएं हैं, जिन्होंने ऐसी संवृद्धि को बरकरार रख पाने में कामयाबी पाई है। एक आकलन के मुताबिक, भारतीय अर्थव्यवस्था वित्त वर्ष 2025 के लिए आशावादी है। व्यापक और समावेशी विकास की उम्मीद की जा रही है।

समावेशी विकास के लक्ष्य को हासिल करने के लिए भारत के नीति नियंताओं ने 'ट्रिकल - डाउन' यानी 'रिसाव के सिद्धांत' पर भरोसा जताया । तमाम सामाजिक-आर्थिक नीतियों के सृजन में इसी सिद्धांत को आधार बनाया गया है। हालांकि 1991 में भारत ने उदारीकरण अपनाने के साथ ही इस सिद्धांत को अंगीकार कर लिया था। पिछले एक दशक में नवउदारवादी आर्थिक नीतियों की गाड़ी त्वरित गति से आगे बढ़ रही है।

'ट्रिकल-डाउन' यानी रिसाव के सिद्धांत के मुताबिक धनी लोगों को दिए जाने वाले फायदे आखिरकार समाज के निचले तबके तक रिस-रिसकर पहुंचते हैं। इस सिद्धांत की मान्यता है कि मुक्त बाजार की व्यवस्था में अगर कुछ लोग बहुत अधिक तरक्की करते हैं तो उसमें कोई गलत बात नहीं, क्योंकि उनकी दौलत उनके खर्चों के माध्यम से रिस कर नीचे आएगी, जिससे समाज के निचले तबकों को भी फायदा पहुंचेगा।

रिसाव की यह मान्यता पिछली सदी के 1970 के दशक से खास लोकप्रिय हुई। 1980 के दशक में अमेरिका में राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन और ब्रिटेन में प्रधानमंत्री मार्गरेट थैचर की आर्थिक नीतियां इसी मान्यता के असर में तैयार की गई थीं। गौरतलब है कि अर्थशास्त्र की मूलभूत अवधारणाओं में 'ट्रिकल - डाउन' नाम का कोई बुनियादी सिद्धांत कभी नहीं रहा । इस शब्द का पहली बार इस्तेमाल हास्य कलाकार विल रोजर्स ने अमेरिकी राष्ट्रपति हर्बर्ट हूवर की आर्थिक नीतियों की आलोचना करने के लिए किया था। भारत के प्रधानमंत्री ने तिहत्तरवें स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर लाल किले की प्राचीर से दिए गए भाषण में संपत्ति का सृजन करनेवाले कारोबारी वर्ग को कर आदि में रियायतें देने बात कही थी। प्रधानमंत्री का कहना था कि इस कदम से अर्थव्यवस्था में निजी पूंजी निवेश को बढ़ावा मिलेगा। रोजगार के अवसर उपलब्ध होंगे। धनाढ्य वर्ग और व्यापारियों को उद्योग और व्यापार में सुगम्यता प्रदान करने के उद्देश्य से सरकार ने अनेक सकारात्मक कदम उठाए। कारपोरेट करों में कटौती समेत कई प्रोत्साहन दिए गए।

वर्ष 2019-20 में कारपोरेट टैक्स की दर को तीस फीसद से घटाकर बाईस फीसद कर दिया गया। साथ ही सरकार ने नई निगमित घरेलू कंपनियों के लिए कारपोरेट टैक्स की दर को पद्रह फीसद कर दिया गया। लेकिन इन रियायतों के अपेक्षित नतीजे नहीं दिखते। कर में कटौती इस उम्मीद में की गई थी कि कारपोरेट क्षेत्र में निजी निवेश बढ़ेगा। वित्तीय वर्ष 2020 और 2021 में निजी पूंजी निर्माण यानी नई मशीनरी और उपकरणों की खरीद में लगातार कमी दर्ज की गई। हालांकि अगले दो वर्षों 2022 और 2023 में निजी पूंजी निर्माण में मामूली बढ़ोतरी दर्ज की गई। वित्तीय वर्ष 2019 और 2023 के दौरान निजी गैर - वित्तीय निगमों का सकल अचल पूंजी निर्माण 34.1 फीसद से बढ़कर 34.9 फीसद ही हुआ। जाहिर है, निजी क्षेत्र ने इन छूटों का उपयोग अपने संयंत्रों का विस्तार करने के बजाय देनदारियों को चुकाने में किया।

वर्ष 2019-23 की अवधि में सरकारी पूंजीगत व्यय ही अर्थव्यवस्था के पहिये को गति देने में सहायक हुआ। केंद्र सरकार का पूंजीगत व्यय 2019-20 के जीडीपी के 1.67 फीसद से बढ़कर चालू वर्ष में 3.2 फीसद तक पहुंच गया है। आर्थिक सर्वेक्षण - 2024 बताता है कि वित्त वर्ष 2020 से केंद्र सरकार के पूंजीगत व्यय में साल दर साल 28.2 फीसद की रफ्तार से वृद्धि हुई है । आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण यानी पीएलएफएस के आंकड़े बताते हैं कि पिछले पांच वर्षों के दौरान श्रम के अनौपचारिकीकरण में वृद्धि हुई है। कृषि में श्रम भागीदारी दर में इजाफा हुआ है। विकास की बुनियादी समझ कहती है कि अर्थव्यवस्था में विकास के साथ खेती में लगी श्रमशक्ति घटनी चाहिए और विनिर्माण और सेवा क्षेत्र में श्रम भागीदारी दर बढ़नी चाहिए। लेकिन इसके बरक्स खेती के कामों में लगे लोगों की संख्या 2018-19 के 42.5 फीसद से बढ़कर 2023-24 में 46.1 फीसद हो गई। इस असंबद्धता की बड़ी वजह है कि कारपोरेट क्षेत्र रोजगार सृजित करने के मामलों में नाकाम साबित हो रहा है। पीएलएफएस के आंकड़े बताते हैं कि भारतीय युवाओं के लिए नौकरियों की कमी एक समस्या बन गई है। वर्ष 2012 से 2023 के दौरान बेरोजगारी दर दुगनी हो गई है।

पिछले एक दशक के दौरान देश में प्रति व्यक्ति आय में तकरीबन पैंतीस फीसद की वृद्धि बताई गई। वर्ष 2014-15 में प्रति व्यक्ति आय 72,805 रुपए थी जो 2022-23 में बढ़कर 98,374 रुपए हो गई। इसमें वार्षिक चक्रवृद्धि दर पर मात्र 3.83 फीसद की तेजी दर्ज की गई। चूंकि, वास्तविक मुद्रास्फीति पर गंभीरता से विचार नहीं किया जाता है, इसलिए प्रति व्यक्ति आय के स्तर में वास्तविक इजाफा और भी कम रह जाएगा। अगर हम शीर्ष की एक फीसद आबादी के अलावा बाकी के निन्यानबे फीसद आबादी के प्रति व्यक्ति आय को देखें तो इसमें मामूली वृद्धि ही दिखती है। इतना ही नहीं, आर्थिक विषमता की खाई भी गहरी हो गई है। पेरिस स्थित शोध संगठन 'वर्ल्ड इनइक्वलिटी लैब' की ओर से हाल में जारी एक शोधपत्र के मुताबिक देश के शीर्ष एक फीसद तबके की आमदनी में हिस्सेदारी अपनी ऐतिहासिक ऊंचाई पर पहुंच गई है। वर्ष 2023 तक सबसे अमीर एक फीसद भारतीयों के पास देश की आय का 22.6 फीसद हिस्सा था ।

घरेलू बचत के मोर्चे पर भी बहुत आशाजनक माहौल नहीं दिखता। वित्त वर्ष 2022 में शुद्ध घरेलू बचत दर 7.3 फीसद से घटकर 5.3 फीसद के स्तर पर आ पहुंची है। यह गत सैंतालीस वर्षों का सबसे निचला स्तर है। दूसरी तरफ परिवारों पर देनदारी यानी ऋण का बोझ बढ़ रहा है। क्रिसिल की एक रपट के अनुसार, वर्ष 2017 में कुल खुदरा ऋण जीडीपी का 12.1 फीसद था जो 2023 में बढ़कर 19.4 फीसद हो गया। वहीं देश में धनकुबेरों की संख्या में वृद्धि हो रही है। दुनिया के अमीर लोगों की 'फोर्ब्स' सूची के अनुसार वर्ष 2014 से 2022 के दौरान, भारतीय अरबपतियों की शुद्ध संपत्ति में 280 फीसद की वृद्धि हुई है। जबकि इसी अवधि में राष्ट्रीय आय में 27.8 फीसद वृद्धि हुई है।

रिसाव के सिद्धांत यानी 'ट्रिकल डाउन' के समर्थकों का तर्क है कि धनी लोगों और कारपोरेट के हाथों में अधिक धन होने से व्यय, बचत, निवेश और रोजगार आदि को बढ़ावा मिलता है । इससे सभी को लाभ होता है । लेकिन भारत के मौजूदा आर्थिक नतीजे बताते हैं कि देश में 'ट्रिकल- डाउन' कारगर नहीं दिखता। आर्थिक नीतियां ऐसी होनी चाहिए जो सिर्फ गिने-चुने लोगों या तबकों को लाभ पहुंचाने के बजाय सभी के लिए हितकारी हों। भारतीय ज्ञान परंपरा में कहा ही गया है- 'सर्वे भवंतु सुखिनः'। यही सूक्ति समग्र आर्थिक नीतियों का प्रेरक दर्शन बने, तभी बृहतर कल्याण के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकेगा।

राष्ट्रीय सहारा

Date: 23-11-24

बैकफुट पर कनाडा

संपादकीय

कनाडा के प्रधानमंत्री जस्टिन ट्रूडो को अपनी ना समझी और शरारतपूर्ण रवैये के कारण एक बार फिर अंतरराष्ट्रीय बिरादरी के सामने शर्मसार होना पड़ा है। भारत सरकार के कड़े विरोध के बाद उनकी सरकार को बयान जारी करके यह कहना पड़ा है कि खालिस्तानी आतंकवादी हरदीप सिंह निज्जर की हत्या में भारत सरकार की किसी तरह की भूमिका नहीं है। इतना ही नहीं बल्कि कनाडा ने 'द ग्लोब एंड मेल' में प्रकाशित उसे दावे को भी खारिज कर दिया जिसमें कहा गया था कि निज्जर की हत्या में भारत के शीर्ष नेतृत्व का हाथ है। 18 जून 2023 में खालिस्तान समर्थक आतंकवादी निज्जर की हत्या कनाडा के सरे स्थित एक गुरुद्वारे के बाहर गोली मारकर हत्या कर दी गई थी। भारत के खिलाफ पश्चिमी देशों की मीडिया हमेशा से विषवमन करती रही है। पिछले वर्षसितम्बर में अमेरिका और पश्चिमी देशों की मीडिया में भारत विरोधी दुष्प्रचार का दौर शुरू हुआ था। 'द न्यूयार्क टाइम्स', 'द इकोनॉमिस्ट' और 'टाइम मैगजीन' जैसे पत्र-पत्रिकाओं ने आतंकवादी की हत्या के लिए भारतीय एजेंसियों को दोषी ठहराया था भारतीय मीडिया में आतंकवादी । भारतीय मीडिया में आतंकवादी निज्जर की हत्या को लेकर प्रायः एक जैसी राय है कि कनाडाई प्रधानमंत्री ट्रूडो के आरोप निराधार और शरारतपूर्ण हैं। मोदी सरकार का विरोध करने वाले समीक्षक भी ट्रूडो के आरोपों को खारिज करते हैं। जस्टिन ट्रूडो को यह समझना होगा कि उनकी नासमझी और शरारत के कारण अंतरराष्ट्रीय संबंधों में ही नहीं बल्कि भारत के राजनीतिक-सामाजिक जीवन में भी समस्याएं पैदा हो सकती हैं। पिछले कुछ वर्षों से कनाडा और भारत के

रिश्तों में तल्खी आई है। एक महीना पूर्व कनाडा ने भारतीय उच्चायुक्त संजय वर्मा और कुछ अन्य राजनीतिकों पर निज्जर की हत्या के मामले में संलिप्तता का आरोप लगाया था जिसके बाद भारत ने अपने छह राजनयिकों को वापस बुला लिया था। उसके बाद से दोनों देशों के संबंध तनावपूर्ण चल रहे हैं। विदेश मंत्रालय ने स्पष्ट रूप से कह दिया है कि कनाडा सरकार अगर इस तरह का भारत विरोधी अभियान चलाती रही तो दोनों देशों के रिश्तों में और तल्खी आएगी। कनाडा सरकार भारत विरोधी गतिविधियों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता मानती है जो कि पूरी तरह गलत है। मोदी सरकार के तेवरों से स्पष्ट है कि भारत अब इन शरारतपूर्ण कार्रवाइयों को बर्दाश्त नहीं करेगी। अब आगे दोनों देशों के रिश्ते इस बात पर निर्भर करेंगे कि कनाडा अपने यहां खालिस्तानी तत्वों के बारे में कैसा रवैया अपनाते है?

Date: 23-11-24

सतर्कता है जरूरी

संपादकीय

देश में डिजिटल अरेस्ट व साइबर ठगी के बढ़ते फ्रॉड को देखते केंद्रीय गृह मंत्रालय ने बड़ा एक्शन लिया है। मंत्रालय के ही आई सी विंग के निर्देश पर सत्रह हजार मेटा माइक्रो ब्लॉगिंग प्लेटफॉर्म वाट्सएप अकाउंट ब्लॉक किये हैं। ये नंबर कंबोडिया, म्यांमार, लाओस व थाईलैंड से एक्टिव थे। गृह मंत्रालय ने जांच में पाया कि डिजिटल अरेस्ट करने वाले जालसाजों के इंटरनेट प्रोटोकॉल डिटेल रिकॉर्ड का ठिकाना यही देश हैं। इस पैसे को दुबई तथा वियतनाम में एटीएम के जरिए निकाला जाता है। लोगों ने ऑनलाइन कंप्लेंट करके चेक रिपोर्ट सस्पेक्ट पर दर्ज कराई थी। कंबोडिया, वियतनाम और म्यांमार में बैठे अपराधी भारतीय नंबर वाला सिम कार्ड अपने एजेंटों के माध्यम से मंगाते हैं। कंबोडिया व म्यांमार भेजे गए पैंतालिस हजार सिम कार्डों को भारतीय एजेंसियों ने निष्क्रिय किया है। ऑनलाइन स्कैम व अन्य अवैध गतिविधियों में भारतीयों की भी मिलीभगत पाई गई है। कंबोडिया में नौकरी के अवसरों के लोभ में झूठे वादों के चक्कर में आकर भारतीय नागरिक मानव तस्करी के जाल में भी फंसते पाए जा रहे हैं। डिजिटल अरेस्ट साइबर ठगी का नया तरीका है। इसमें सीबीआई, ईडी का अधिकारी या पुलिस अधिकारी के तौर पर अपना परिचय देकर ऑडियो / वीडियो कॉल के मार्फत पीड़ितों को जाल में फंसाया जाता है। उन्हें धमकियां देकर ऑनलाइन पैसा ट्रांसफर कराया जाता है। लोगों का विश्वास जीतने के लिए स्कैमर्स सोशल इंजीनियरिंग की मदद लेते हैं। बदनामी के डर या मखौल उड़ाए जाने से भयभीत पीड़ित आम तौर पर ठगी की शिकायतें भी करने से अचकचाते हैं। बीते दस महीनों में ही डिजिटल अरेस्ट के नाम पर स्कैमर्स ने इक्कीस हजार करोड़ रुपये की ठगी की है। जनवरी- अक्टूबर के दरम्यान 92 हजार से ज्यादा डिजिटल अरेस्ट के मामले दर्ज किए जा चुके हैं। सरकार ने साइबर फ्रॉड के लिए नेशनल हेल्पलाइन जैसे नंबर जारी करने जैसे कदम उठाए हैं। जरूरत सतर्क बने रहने की है। अनजान कॉल को काटने, ब्लॉक करने और जरूरत पड़ने पर उसकी शिकायत करने को आदत बनाना होगा।

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 23-11-24

कनाडा की सफाई

संपादकीय

राजनीति में भले ही मनगत आरोप भी लगाए जाते हो, पर कूटनीति में ऐसे आरोपों के लिए कोई जगह नहीं होती। कूटनीति में शालीनता और मर्यादा का अपना स्तर होता है, जिसकी पालना अवश्य होनी चाहिए। आज के समय में कनाडा अपने वहां सक्रिय अलगाववादियों और आतंकियों के बचाव में जिस तरह से लगा हुआ है, आगे कोई आश्चर्य की बात नहीं कि वहां के कुछ अखबार भी आग में घी डालने का काम करने लगे हैं। इसी कड़ी में कनाडा के एक अखबार ने वह दावा कर दिया था कि आतंकी नजर को मारने की साजिश में डोभाल और जयशंकर भी शामिल थे। इतना ही नहीं, निंदनीय आपराधिक लापरवाही बरतते हुए इस मामले से भारत के प्रधानमंत्री का नाम भी जोड़ दिया था। जाहिर है भारतीय विदेश मंत्रालय ने इस पर कड़ी आपत्ति जताई थी और अब कनाडा सरकार की सफाई ही नहीं, वह सच्चाई भी सामने आ गई है, जिसकी बात विगत कई महीनों से भारत लगातार करता आ रहा है भारत की इस बात की तस्दीक हुई है कि कनाडा केवल संदेह के आधार पर भारत पर आरोप लगा रहा है और उसके पास सुबूत नहीं है।

गौर करने की बात है कि अक्तूबर में भारत-कनाडा संबंध ज्यादा खराब हो गए, क्योंकि कनाडा ने उच्चायुक्त संजय वर्मा सहित कुछ राजनयिकों के नाम हत्या की साजिश से जोड़ दिए थे। भारत चूंकि एक उदार देश है, इसलिए कनाडा ने भारत की प्रतिक्रिया पर कान देना भी उचित नहीं समझा। नतीजा, वहां अलगाववादियों का दुस्साहस लगातार बढ़ता जा रहा है। हालांकि, अखबारों या मीडिया को संयम से काम लेना चाहिए, पर यहां न जाने किसके इशारे पर भारतीय प्रधानमंत्री तक को सीधे निशाने पर ले लिया गया। अब कनाडा को मानना पड़ा है कि भारतीय नेताओं और राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार को गंभीर आपराधिक गतिविधि से जोड़ने वाले किसी भी सुबूत के बारे में उन्हें नहीं पता और न ऐसी कोई सूचना है। दर्ज किया जाना चाहिए कि कनाडा के प्रधानमंत्री जस्टिन ट्रूडो के राष्ट्रीय सुरक्षा और खुफिया सलाहकार नथाली जी ड्रोइन ने अपने बयान में कहा है कि आरोप के सुझाव काल्पनिक और गलत, दोनों हैं। जाहिर है, भारत की नाराजगी जायज है। कनाडा जो बदनामी अभियान भारत के खिलाफ चला रहा है, उसका मुंहतोड़ जवाब देना ही चाहिए। आरोप लगाने वालों के खिलाफ अगर कानूनी कार्यवाही की जाए, तो गलत नहीं है। बगैर प्रमाण यह आरोप लगा देना किसी अपराध से कम नहीं कि भारतीय प्रधानमंत्री को अलगाववादी हरदीप सिंह निज्जर को मारने की कथित साजिश के बारे में पता था।

कनाडा को अपने रवैये में बदलाव लाना चाहिए। विगत महीनों में उसके भारत विरोधी रुख से बहुत तनाव की स्थिति बनी है। बड़ी संख्या में भारतीय मूल के लोग कनाडा में रहते हैं और पढ़ने के लिए भी बड़ी संख्या में वहां छात्र गए हुए हैं। अतः दोनों देशों के संबंध मधुर रहें, तो ज्यादा बेहतर है, पर वहां भारत विरोधी अलगाववादियों की सियासी साजिश की वजह से कनाडा सरकार लगातार गलत फैसले ले रही है या अपने यहां अलगाववाद को जमीन दे रही है। हालांकि,

यह सूचना सकारात्मक है कि कनाडा की ताजा सफाई से संबंधों में खटास कम होगी। एयरपोर्ट पर भारतीय छात्रों के साथ अनावश्यक सख्ती भी घटेगी। भारत अपनी सुरक्षा को लेकर चिंतित है और कनाडा को भारत की अखंडता का सम्मान करना चाहिए।

Date: 23-11-24

आबोहवा की सफाई में मददगार नहीं कृत्रिम बारिश

पंकज चतुर्वेदी, (वरिष्ठ पत्रकार)

इस साल सुप्रीम कोर्ट ने जाड़े की शुरुआत से कोई एक महीना पहले ही दिल्ली सरकार और वायु गुणवत्ता प्रबंधन आयोग को सतर्क कर दिया था, लेकिन दावों और वादों की हकीकत दीपोत्सव के अगले दिन ही सामने आ गई। दिल्ली और एनसीआर, यानी गाजियाबाद, गुरुग्राम, फरीदाबाद, नोएडा आदि में हवा को फेफड़े का कैंसर पैदा करने वाले जहर में तब्दील होने से रोकने के लिए आतिशबाजी पर रोक के सुप्रीम कोर्ट के आदेश की किसी ने परवाह नहीं की थी। फिर हरियाणा-पंजाब में पराली न जाने देने के निर्देश की भी खुली नाफरमानी दिखी।

साफ है, यह अपनी जिम्मेदारी से भागने के सिवा कुछ भी नहीं। दिल्ली में पूरे साल में बमुश्किल 40 दिन हवा साफ रहती है, गाजियाबाद तो बीते पांच वर्षों से देश के सबसे प्रदूषित नगरों में से एक है। मगर पिछले कई वर्षों की तरह इस बार भी जब शीर्ष अदालत ने सख्ती दिखाई, तो सरकार एक नया तकनीकी निदान लेकर आ गई- कृत्रिम बारिश। एक तो यह समझना होगा कि देश हो या दिल्ली, हमारा प्रयास सबसे पहले यह होना चाहिए कि प्राणवायु को जहर बनाने वाले कारणों पर नियंत्रण हो, जबकि सरकारी तंत्र जहर हो गई हवा को शुद्ध करने की जुगत बताता है।

दिल्ली सरकार का 'विंटर प्लान' नाम से एक नया शिगूफा सामने आया है, यानी कृत्रिम बारिश। इससे पहले सम-विषम वाहन संचालन और फिर स्मॉग टॉवर को लेकर विज्ञापनों के जरिये ऐसा तूमार बांधा गया था कि बस! अब दिल्ली की हवा साफ होने ही वाली है। करीब 25 करोड़ के स्मॉग-टॉवर कहीं धूल खा रहे हैं। उन प्रयोगों के बुरी तरह असफल रहने के बाद अब कृत्रिम बारिश को रामबाण के रूप में प्रचारित किया जा रहा है। मगर हमें यह समझना होगा कि पर्यावरण से जुड़ी किसी भी समस्या का संपूर्ण निराकरण किसी तकनीकी में नहीं, बल्कि आत्म- नियंत्रण में छिपा है। कोई तकनीकी पहल कुछतात्कालिक राहत दे सकती है, लेकिन वह निराकरण नहीं है।

जिस कृत्रिम बारिश का प्रचार किया जा रहा है, उसकी तकनीक को समझना यहां जरूरी है। इसके लिए विमान से सिल्वर आयोडाइड व कई अन्य रासायनिक पदार्थों का छिड़काव किया जाता है, जिससे सूखी बर्फ के कण तैयार होते हैं। असल में, सूखी बर्फ ठोस कार्बन डाई- ऑक्साइड ही होती है। सूखी बर्फ की खासियत यह है कि इसके पिघलने से पानी नहीं बनता और यह गैस के रूप में ही लुप्त हो जाती है। यदि वातावरण के बादलों में थोड़ी भी नमी होती है, तो वे सूखी बर्फ के कणों से चिपक जाते हैं और इस तरह बादल का वजन बढ़ जाता है, जिससे बारिश हो जाती है।

इस तरह की वर्षा के लिए जरूरी है कि वायुमंडल में कम से कम 40 फीसदी नमी हो, फिर यह थोड़ी देर की बारिश होती है। इसके साथ यह खतरा बना रहता है कि वायुमंडल में कुछ ऊंचाई पर जमा स्मॉग व अन्य छोटे कण फिर धरती पर आ सकते हैं। यह वैश्विक रूप से प्रमाणित तथ्य है कि कृत्रिम तरीके से बारिश करवाना कई बार बहुत भारी पड़ता है। फिर उस दिल्ली-एनसीआर में, जहां कुछ मिनट की वर्षा से तमाम नाले उफन पड़ते हैं, जगह-जगह जाम लग जाता है। यही जाम तो दिल्ली की हवा में सबसे अधिक जहर घोलता है। जाहिर है, कृत्रिम वर्षा से जितना प्रदूषण कम नहीं होगा, उससे अधिक वाहनों के ठिठकने से उपजे धुएं से बढ़ जाएगा। कृत्रिम बारिश से बाढ़ भी आ सकती है, जिससे जान-माल की हानि उठानी पड़े। पिछले साल दुबई व कई अरब देशों में आई अचानक बाढ़ का मूल कारक कृत्रिम बारिश को भी माना गया था।

'सेंटर फॉर साइंस ऐंड एनवायर्नमेंट' की ताजा रिपोर्ट बताती है कि दिल्ली की हवा को जहरीली बनाने में 40 प्रतिशत योगदान यातायात के बाधित होने का है। बहुत सी जगहों पर सड़कें संकरी हैं, तो साल भर में 7,000 से अधिक बार तो सरकारी बसें सड़क पर खराब होती हैं। गौर कीजिए, दिल्ली-एनसीआर में हर दिन कोई सवा करोड़ वाहन सड़क पर होते हैं। ये घातक उत्सर्जन कर रहे हैं। कहने को उत्सर्जन शून्य बिजली के वाहन भी सड़कों पर उतार दिए गए हैं, लेकिन इस बात का कोई जवाब नहीं दे रहा कि वाहन - टायर की घिसाई से पीएम 2.5 से छोटे नैनो पार्टिकल व वाहनों में इस्तेमाल की गई बैटरी से होने वाले अम्ल से उपजे जहर तो सांसों पर सीधी मार करते हैं, उनका इलाज क्या है?